Pandurang Vaman Kane

It is not often that one comes across stories of people who have had a strong vision and mission guiding their entire life. Dr. Pandurang Vaman Kane is one such person who never let his interest in research fade the slightest. Born in a village called Pedhem near Chiplun in the Ratnagiri district of Maharashtra on May 7, 1880, Dr. P.V. Kane is a source of unending inspiration to generations of young Sanskritists and Indologists.

Dr. Kane was a precocious child who had committed to memory, 400 verses of Amarakosa, by the age of 12. He passed his Matriculation examination of Bombay University in 1897. He passed his B.A. with Sanskrit and was awarded Bhau Daji prize for proficiency in Sanskrit. In 1902, he passed first LL.B. examination in First Class and got his M.A. in 1903, with Sanskrit and English, securing the Zala Vedanta prize of Rs. 400/- for the paper setting and answered in Sanskrit.

While he was working as a teacher in the Government High School in Ratnagiri, he wrote an essay on 'Aryan Manners and Morals as depicted in the Epics', which got him the Mandalik Gold Medal of the Bombay University in 1905. He wrote another essay on 'History of Alankara Literature' in 1906 and secured the Mandalik Gold Medal again. He started teaching in Elphinstone High School in 1907. His career as an advocate at the High Court began in July, 1911.

He passed his LL.M examination in Hindu and Mahomedan law in 1911. His association with the Bombay Branch with the Royal Asiatic Society started as one of its ordinary members; 2 years later he became its Life Member. In 1916, he worked as Honorary Professor of Sanskrit in Wilson College, his own Alma Mater. He was Professor of Law, Government Law College from 1917 to 1928.

Prof. Kane's career at the Bar proved to be a great success. He came to be recognized as an authority at Hindu Law, respected by the Bench and Bar. He worked in the legal field from 1919 to 1949. At the same time, he pursued his Indology studies. His introduction to Sahityadarpana of Vishvanatha published in 1910, so highly impressed the French Scholar Sylvan Levi that he urged Kane to write a full-fledged history of Sahityashastra.

In 1923, Kane published a 2nd edition of Sahityadarpana with an introduction of 77 pages dealing with the history of Alankarashastra. In the 1951 edition, this history was enlarged to 423 pages and then published as a separate volume, in 1961. Dr. Kane's researches in Dharma-Shastra started in 1911 by undertaking an edition of a book called Vyavahara Mayukha. Kane's critical edition of the work was published in 1928.

He was a Fellow of the University of Bombay from 1919 to 1928. He was conferred the title of Mahamahopadhyaya in 1942 by the British government. In 1947, he became the Vice Chancellor of the University of Bombay. The President of India named Kane as member of the Rajya Sabha first in 1953 and again in 1958. This gave him an opportunity to work with several committees considering Hindu Adoption Act, the Hindu Marriage Act, The Hindu Succession Act. His interpretations of original texts were accepted by the Parliament when Hindu Succession Act was placed on the statute book. He was appointed National Professor of Indology in 1959. Sahitya Academy awarded its prize for the fourth volume of Dharmashastra in 1956. In 1963, Dr. P.V. Kane was awarded with Bharat Ratna, the highest civilian award in India.

Asiatic Society of Bombay had been his second home. He took part in the activities of the Society as member of its Managing Committee as well as its Vice President for several years. He was also editor of its Journal. He was one of the Founders of the Bhandarkar Oriental Research Institute. He was closely associated with the Deccan College as well as Maharashtra Sahitya Parishad.

History of Indian culture and religion will remain incomplete without a reverential reference to his monumental work. His contributions are marked by an extensive sweep of his research interest and activity in the domains of Mimamsa, Dharmashastra, Indian astronomy and astrology, Sanskrit poetics, and the Indian jurisprudence.

Department of Posts is pleased to issue a Commemorative Postage Stamp on Pandurang Vaman Kane.

Credits

Stamp/FDC/Brochure/ Cancellation Cachet : Smt. Nenu Gupta

Text : Referenced from the contents provided by the proponent.

डाक विभाग
Department of Posts

पांडुरंग वामन काणे
PANDURANG VAMAN KANE

विवरणिका BROCHURE

पांडुरंग वामन काणे

ऐसा यदा कदा होता है कि जब हम ऐसे व्यक्तियों के जीवन के असाधारण पहलुओं से प्रभावित होते हैं जिनका सम्पूर्ण जीवन एक प्रबल दूरदृष्टि और दूरगामी लक्ष्यों से प्रेरित रहा हो। डॉ. पांडुरंग वामन काणे एक ऐसे ही व्यक्ति हैं जिन्होंने शोध के क्षेत्र में अपनी रुचि को कभी रत्ती भर भी कम नहीं होने दिया। 7 मई, 1880 को महाराष्ट्र के रत्नागिरि जिले के चिपलून के निकट पेधेम नामक गांव में जन्मे डॉ. पी.वी. काणे युवा संस्कृतविदों और भारत–विदों की पीढ़ियों के लिए अनंत प्रेरणा के स्रोत हैं।

डॉ. काणे इतने कुशाग्र बालक थे कि उन्होनें 12 वर्ष की आयु तक अमरकोष के 400 श्लोकों को कंठस्थ कर लिया था। उन्होंने 1897 में बंबई विश्वविद्यालय से मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण की। उन्होंने संस्कृत विषय के साथ बी.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की और उन्हें संस्कृत में निपुणता के लिए भाऊदाजी पुरस्कार से सम्मानित किया गया। सबसे पहले वर्ष 1902 में उन्होंने प्रथम श्रेणी में एलएल.बी. परीक्षा उत्तीर्ण की। वर्ष 1903 में उन्होंने संस्कृत एवं अंग्रेजी विषय में एम.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की तथा संस्कृत विषय में पेपर बनाने और उनके उत्तर तैयार करने के लिए 400/– रूपये के झाला वेदांत पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

जब वे रत्नागिरि के शासकीय हाई स्कूल में शिक्षक के रूप में कार्यरत थे, उन्होंने 'महाकाव्यों में दर्शाए अनुसार आर्य शिष्टाचार और नैतिकता' पर एक निबंध लिखा, जिसके लिए उन्हें 1905 में बंबई विश्वविद्यालय का मांडलिक स्वर्ण पदक प्रदान किया गया। उन्होंने 1906 में 'अलंकार साहित्य के इतिहास' पर एक और निबंध लिखा और उन्हें पुनः मांडलिक स्वर्ण पदक से सम्मानित किया गया। उन्होंने 1907 में एलफिंस्टन हाई स्कूल में अध्यापन कार्य शुरू किया। उच्च न्यायालय में एक वकील के रूप में उनका कैरियर जुलाई, 1911 में आरंभ हुआ।

उन्होंने 1911 में हिंदू और मुस्लिम कानून में एलएल.एम. की परीक्षा उत्तीर्ण की। वे रॉयल एशियाटिक सोसाइटी की बंबई शाखा के साथ एक सामान्य सदस्य के रूप में जुड़े; 2 वर्ष के पश्चात वे इसके आजीवन सदस्य बन गए। 1916 में, उन्होंने जहां शिक्षा पाई, उस विल्सन कॉलेज में संस्कृत के मानद प्रोफेसर के रूप में कार्य किया। वे 1917 से 1928 तक गवर्नमेंट लॉ कॉलेज में कानून के प्रोफेसर रहे।

बार में प्रो. काणे का करियर बहुत सफल रहा। उन्हें हिंदू कानून में एक आधिकारिक विद्वान के रूप में मान्यता दी गई, जिसका सम्मान बेंच और बार द्वारा किया गया। उन्होंने 1919 से 1949 तक कानून के क्षेत्र में कार्य किया। साथ ही, उन्होंने अपनी भारतीय विद्या (इंडोलॉजी) की पढ़ाई की। 1910 में प्रकाशित विश्वनाथ कृत 'साहित्यदर्पण' का उनका प्राक्कथन पढ़कर फ्रांसीसी विद्वान सिल्वन लेवी इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने डॉ. पी. वी. काणे से साहित्यशास्त्र का संपूर्ण इतिहास लिखने का आग्रह किया।

1923 में, डॉ. काणे ने अलंकारशास्त्र के इतिहास से संबंधित 77 पृष्ठों का प्राक्कथन लिखकर साहित्य दर्पण का दूसरा संस्करण प्रकाशित किया। 1951 के संस्करण में, यह इतिहास 423 पृष्ठों का लिखा गया और फिर 1961 में एक अलग खंड के रूप में प्रकाशित किया गया। डॉ. काणे का धर्म–शास्त्र में शोध कार्य 1911 में 'व्यवहार मयूख' नामक पुस्तक के एक संस्करण के साथ शुरू हुआ। डॉ. पी. वी. काणे की इस पुस्तक का आलोचनात्मक संस्करण 1928 में प्रकाशित हुआ था।

वे 1919 से 1928 तक बंबई विश्वविद्यालय के अध्येता रहे। उन्हें ब्रिटिश सरकार द्वारा 1942 में महामहोपाध्याय की उपाधि से सम्मानित किया गया। 1947 में, वे बंबई विश्वविद्यालय के कुलपति बने। भारत के राष्ट्रपति ने डॉ. पी. वी. काणे को पहले 1953 में और 1958 में पुनः राज्यसभा के सदस्य के रूप में नामित किया। इससे उन्हें हिंदू दत्तक ग्रहण अधिनियम, हिंदू विवाह अधिनियम, हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम पर विचार कर रही कई समितियों के साथ काम करने का अवसर मिला। मूल ग्रंथों की उनकी व्याख्या को संसद द्वारा तब स्वीकार किया गया, जब हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम को कानून की पुस्तक में रखा गया। 1959 में उन्हें भारतीय विद्या (इंडोलॉजी) का राष्ट्रीय प्रोफेसर नियुक्त किया गया था। साहित्य अकादमी ने 1956 में धर्मशास्त्र के चौथे खंड के लिए उन्हें पुरस्कार प्रदान किया। डॉ. पी.वी. काणे को 1963 में भारत के सर्वोच्च नागरिक सम्मान भारत रत्न से सम्मानित किया गया।

बंबई की एशियाटिक सोसाइटी उनका दूसरा घर था। उन्होंने कई वर्षों तक इसकी प्रबंध समिति के सदस्य के साथ–साथ इसके उपाध्यक्ष के रूप में सोसायटी के क्रियाकलापों में भाग लिया। वे इसकी पत्रिका के संपादक भी थे। वे भंडारकर ओरिएंटल रिसर्च इंस्टीट्यूट के संस्थापकों में से एक थे। वे डेक्कन कॉलेज के साथ–साथ महाराष्ट्र साहित्य परिषद से भी निकटता से जुड़े हुए थे।

भारतीय संस्कृति एवं धर्म के इतिहास में उनके अति महत्वपूर्ण कार्यों का सम्मानजनक स्थान है। मीमांसा, धर्मशास्त्र, भारतीय खगोल विज्ञान एवं ज्योतिष, संस्कृत काव्य एवं भारतीय विधिशास्त्र के क्षेत्र में रचनाओं पर उनकी शोध रुचियों और क्रियाकलापों के व्यापक क्षेत्र का विशेष प्रभाव पड़ा है।

डाक विभाग, पांडुरंग वामन काणे पर स्मारक डाक–टिकट जारी करते हुए प्रसन्नता का अनुभव करता है।

आभार :

डाक–टिकट/प्रथम दिवस आवरण/ विवरणिका/विरूपण कैशे : श्रीमती नीनू गुप्ता

पाठ : प्रस्तावक द्वारा उपलब्ध कराई गई सामग्री से संदर्भित

तकनीकी आंकड़े

TECHNICAL DATA

मूल्यवर्ग	: 500 पैसे
Denomination	: 500 p
मुद्रित डाक–टिकटें	: 302200
Stamps Printed	: 302200
मुद्रण प्रक्रिया	: वेट ऑफसेट
Printing Process	: Wet Offset
मुद्रक	: प्रतिभूति मुद्रणालय, हैदराबाद
Printer	: Security Printing Press, Hyderabad

The philatelic items are available for sale at Philately Bureaus across India and online at http://www.epostoffice.gov.in/PHILATELY 3D.html

मूल्य ₹ 5.00